गद्य

3 वल्लभ भाई पटेल

--- रामनाथ 'सुमन'

लेखक परिचय

श्री रामनाथ 'सुमन' प्रयाग के निवासी और हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक और कवि हैं। इन्होंने पद्य की अपेक्षा गद्य-लेखन की दिशा में अधिक और महत्वपूर्ण काम किया है। इनकी भाषा तो जैसे इनके पीछे हाथ जोड़े चलती है। रचनाओं में कुछ तो साधारण शैली में हैं, जो भारतीय पारिवारिक जीवन से संबंधित साहित्य के अन्तर्गत आती हैं और कुछ ओजस्वी एवं स्फूर्तिदायक शैली में हुई हैं, जो नवयुवकों के लिए विशेष प्रेरणादायक हैं। 'वेदी के फूल' नाम से इन्होंने एक गद्य-काव्य भी लिखा है, जिसमें राष्ट्र की वेदी पर मर मिटनेवाले वीरों की मर्मस्पर्शी गाथाएँ हैं।

इन सबके अतिरिक्त राष्ट्र-नेताओं की जीवनियाँ भी इन्होंने प्रौढ़ और विवेचनात्मक शैली में लिखी हैं। इनकी ख्याति का आधार वस्तुतः इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। नीचे स्वर्गीय सरदार पटेल की सुमनजी द्वारा प्रस्तुत जीवन-झाँकी दी जा रही है, इसीसे लेखक की प्रतिभा का परिचय पाठकों को मिल जाएगा।

आपने बहुत-से आदर्श चरित्रों को पढ़ा और सुना होगा, लेकिन वल्लभभाई पटेल जैसा दृढ, निर्भीक, सच्चा और सरल चरित्र शायद ही कहीं देखा हो। यही कारण है कि उनका व्यक्तित्व आज भी युवा पीढ़ी के लिए आदर्श बना हुआ है। यह पाठ पढ़कर आप सहज ही समझ सकेंगे उन्हें 'लौह पुरुष' क्यों कहा जाता है!

सबसे पहली बात, जो वल्लभभाई के जीवन में शुरू से अन्त तक एक स्वर्ण-रेखा की तरह चली गयी थी, उनकी सच्ची वीरता थी। उनके जीवन पर निर्भयता की छाप थी। वल्लभभाई ने महात्माजी को अपनाया ज़रूर; पर वह उनकी भाँति साधक नहीं, शिक्षक नहीं, एक योद्धा थे। इसी रूप में वह खिलते थे। आदर्श सत्याग्रही की भाँति वह अपने को मिट्टी में, शून्य में नहीं मिला सकते थे, उनमें सत्याग्रही की अजातशत्रुता नहीं थी, उनमें वीरोचित क्षमा थी। युद्ध उनका स्वभाव था। युद्ध को देखकर उनमें अद्भुत भावावेश उमड़ता था और मध्ययुगीन वीर राजपूत की नाईं सामने के युद्ध में उनका जीवन हँस उठता था। वल्लभभाई को तब देखो जब कोई

युद्ध चल रहा हो– छाती में आँधी का साहस, भुजाएँ फड़कती हुईं, दिल उमंगों के सुरूर पर चढ़ा हुआ, वाणी आग उगलनेवाली! युद्ध में वह जीते-से मालूम पड़ते थे। युद्ध के बाद के वल्लभभाई को युद्ध के समय के वल्लभभाई से मिला लो, उनका रहस्य निकल आएगा। पहला दूसरे के सामने मुर्दा है।

यह आदमी अपने जीवन की प्रत्येक साँस के साथ खतरे को प्यार करता था। जोखिम का काम हो, फिर देखो उसे। उसका दिल जूझने के लिए बल्लियाँ उछलता था। वह आग से खेलना चाहता था। बारडोली की लड़ाई की भूमिका जब बँध रही थी तब उसने किसानों की सभा में कहा था-"मेरे साथ कोई खिलवाड़ नहीं कर सकता। मैं किसी ऐसे काम में नहीं पड़ता। जिसमें कोई खतरा या जोखिम न हो। जो लोग आपत्तियों को निमंत्रण दें, उनकी सहायता के लिए मैं तैयार हूँ।"

और ऐसा भी नहीं कि यह प्रवृत्ति असहयोग-काल में यकायक उत्पन्न हो गयी हो। नहीं, वह उनमें शुरू से थी। कठिनाइयाँ उन्हें झुका नहीं सकतीं, भय उन्हें डरा नहीं सकता। जब वह बालक थे, तब भी यही निर्भीकता थी। उसी बालपन की घटना है– उनकी काँख में फोड़ा हुआ; एक गँवार वैद्य ने दवा बतायी-लोहा गर्म करके फोड़े में भोंक दो। बालक वल्लभभाई झट तैयार! लोहा गर्म हुआ। भोंकनेवाले ने उसे हाथ में लिया, पर उसका दिल इस कोमल बालक को देखकर काँप गया। हिचकिचाने लगा। बालक झुँझला उठा– "क्या देख रहा है भाई? लोहा ठंडा हो रहा है। ले, तुझसे नहीं बनता, तो मैं भोंक लूँ!" ग्रामीण दंग रह गया।

इस वीर पुरुष के दिल में वह लोहा कभी ठंडा न हुआ। जब वह उस लोहे को ठंडा होता देखता, तो तड़प उठता। जब तक वह गर्म है तब तक वातावरण में आँधी है, तूफ़ान है, खतरा है। जब तक ज्वाला धू-धू करके आकाश में उठती जाती है तब तक उसका स्वर्ग है। आँधी रुकी, ज्वाला बुझी और दिल उछालनेवाली चीज़ सुस्त पड़ी। खतरे के समय ज्वालामुखी की तरह उसके मुख से आग ही आग निकलती है।

सच बात यह है कि वल्लभभाई का विवेक गाँधीजी को भले ही चुमता हो, पर उनकी 'स्पिरिट', उनकी प्रेरणा, उनकी प्रकृति लोकमान्य से ज़्यादा मिलती है। निश्चय ही लोकमान्य के 'शठं प्रति शाठ्यम्' – 'जैसे को तैसा' को वल्लभभाई ने गाँधीजी के प्रभाव में कोमल कर दिया। गाँधीजी के 'शठं प्रत्यपि सत्यं' – 'काँटे के बदले फूल' को वह अपनाना चाहते थे; जहाँ तक शरीर का सवाल है, अपना ही लिया; उसे श्रेष्ठ भी समझा, पर उनका जीवन जिन चीज़ों से गढ़ा गया था, उनमें वह 'फ़िट' नहीं होता था, मिलकर बिलकुल ही एक नहीं हो जाता था-- अलग ही अलग रहता था। वह उसे अपनाते थे, पर गाँधीजी की भाँति, इस साधना में उनकी आत्मा परिपूर्ण होकर खिल नहीं उठती थी। वह परिस्थिति एवं बुद्धि-विवेक से 'गाँधीत्व' की तरफ़

झुके हुए था, पर प्रकृति, स्वभाव और प्रवृत्ति से 'लोकमान्यत्व' की तरफ़। और सब मिलकर जैसे थे, उनमें न लोकमान्य थे, न गाँधी, इन दोनों के सम्मिश्रण थे। दोनों की कुछ बातें थीं, कुछ नहीं थीं।

क्षण-भर वल्लभभाई को लोकमान्य और गाँधी दोनों की कसौटी पर कसकर देखें। लोकमान्य की अगाध विद्‌वत्ता वल्लभभाई में नहीं थी। लोकमान्य के गंभीर शास्त्रज्ञान से वह दूर थे। लोकमान्य की राजनीतिक व्यवहार-बुद्धि भी उनमें नहीं थी। दूसरी ओर उनमें वह अथक परिश्रम वह दृढ लगन हम देखते हैं, जो लोकमान्य के जीवन की विशेषता थी। लोकमान्य की भाँति ही वल्लभभाई जनसेवा में आत्मविस्तृत होकर चलते थे। लोकमान्य के सदृश ही वह अपने महत्त्व का स्मरण नहीं रखते थे। और अपने विषय में बहुत कम लिखते या बोलते थे। इतना ही क्यों, लोकमान्य की भाँति ही ऊपर से रूखे, निष्ठुर और अभिमानी-सा लगते हुए भी भीतर से सरल, कोमल और निराभिमान थे।

इतनी समानताओं के बाद कुछ निष्कर्ष निकालने ही बैठें, तो क्या निकले? पर इतना तो स्पष्ट हो ही जाता है कि उन्हें हम लोकमान्य के साथ नहीं बैठा सकते। सब कुछ होते हुए भी लोकमान्य और वल्लभभाई के निर्माण में एक महान अन्तर है। और वह यह है कि लोकमान्य जहाँ राजनीतिज्ञ थे, वहाँ वल्लभभाई राजनीतिज्ञ नहीं–यौद्धा थे, सैनिक थे, सेनापति थे। राजनीतिज्ञ और योद्धा में तत्त्वतः ही अन्तर है। राजनीतिज्ञ का ज़बान पर काबू होता है; उसके लिए वह एक अस्त्र है। उसके शब्द ठंडे, प्रायः दो-अर्थी होते हैं। वह अपने मन का भाव ज़बान तक नहीं आने देता। वह अवसर का उपयोग करता है। और योद्धा जिसे हम उपयोगिता कहते हैं, उसे लेकर नहीं चलता; भावना को, स्पिरिट' को लेकर चलता है। वह खतरे को प्यार करता है। वीरता उसकी देवी है और साहस उसका अनुचर है। जब आसमान पर घटाएँ छा रही हों तब जहाँ राजनीतिज्ञ के ललाट पर विचार की रेखाएँ होती हैं और आँखों में चिन्ता की छाया, वहाँ योद्धा का दिल उमंगों से भरा हुआ-अब उमड़ा, अब उमड़ा, ऐसा होता है। शत्रु की ललकार सुनकर राजनीतिज्ञ सोचेगा कि अभी वार करना चाहिए या नहीं; योद्धा झट बाहर निकल पड़ेगा। इस दृष्टि से लोकमान्य और वल्लभभाई समान प्रवृति लेकर भी समान नहीं हैं और उनमें अन्तर है।

और महात्माजी को लेकर वल्लभभाई की ओर देखते हैं, तो भी इसी बात पर पहुँचते हैं कि दोनों में अन्तर है। अन्तर मात्राओं का नहीं, प्रवृत्ति के साथ तात्त्विक भेद भी तो है। गाँधीजी एक साधक थे। सत्य, आत्म साक्षात्कार उनका लक्ष्य था। इसलिए स्वभावतः उनका जीवन अनावृत, खुला हुआ है। इसकी साधना में सहायक होनेवाली छोटी से छोटी बात भी वह कह डालते थे– जिन व्यक्तिगत बातों के कहने में आदमी काँप उठे, सत्य की साधना में ज़रा भी सहायता मिलने की संभावना हो, तो उन्हें भी वह अत्यन्त निष्ठुरता के साथ कह डालते। कुछ

नगण्य व्यक्तिगत उपहार पास रख लेने पर कस्तूरबा के सम्बन्ध में उन्होंने जो कुछ और जैसी निष्ठुरता के साथ लिखा था, वह दूसरे से संभव नहीं, वह निर्मोही आध्यात्मिक साधक से ही संभव है; वह उसीका पथ है। वल्लभभाई एक सच्चे आत्मत्यागी वीर पुरुष की भाँति अपने जीवन के प्रति मौन थे। इतने मौन कि झुंझलाहट होती है।

गाँधीजी विरोधी के साथ लड़ते हैं, पर उसे विरोधी समझकर नहीं, उसके विनाश के लिए नहीं, उसे सुधारने के लिए, उसे गलत रास्ते से हटाने के लिए। युद्ध के समय भी विरोधी के सच्चे कल्याण का ध्यान उन्हें रहता है। यह साधक की अन्तःकरण के पोर-पोर में भीनी हुई उदारता है, जिसकी ऊँचाई पर वस्तुतः कोई शत्रु नहीं रह जाता। वल्लभभाई की उदारता वीर योद्धा की उदारता थी। जो छिपकर वार करना नहीं जानती, पर सामने की लड़ाई में शत्रु को आग्नेय नेत्रों से देखती है और उसे मटिया-मेट कर देना चाहती है, जो शत्रु की पराजय से उल्लासित है। इसी प्रकार जब गाँधीजी सच्चे सत्याग्रही की भाँति विरोधी को अपने कार्यक्रम की सूचना पहले ही दे देते हैं, तब वल्लभभाई उनके मुँह से, शत्रु या मित्र क्रिया में आने के पहले उनका कोई कार्यक्रम नहीं जान सकता था।

इतना ही नहीं, माखनलालजी के सुन्दर शब्दों में तो "जब महात्माजी छोटे से छोटे आदमी के कुतूहलों तक का जवाब थे (तब) वल्लभभाई से सवाल पूछने का साहस ही बहुत कम को हो पाता था।

उनके विषय में तो केवल यही कहा जा सकता है कि वह जवाब सदैव अपने विरोधी को ही देते थे। महात्माजी जीवन की आत्मकथा लिख सकते थे, किन्तु वल्लभभाई आत्मचर्चा कभी करते ही नहीं थे। महात्माजी का संन्यास और उनका तप महान प्रयत्नों की सिद्धि था, वीर वल्लभभाई का संन्यास एक दिन प्रातःकाल उठकर किया हुआ, किन्तु सदैव टिकनेवाला सिपाही का प्रण था। महात्माजी साधक, सुधारक और शिक्षक थे। वल्लभभाई न सुधारक थे, न साधक, न शिक्षक। वह योद्धा थे, सेनानी थे, सिपाहसालार थे। महात्माजी की महान क्षमा में आत्मनिरीक्षण और आत्मचिन्तन होना ही चाहिए। वल्लभभाई की क्षमा वीरोचित क्षमा थी, उसमें अपने योद्धा की सौ भूलें माफ़ थीं....।"

इतनी बातें कर लेने पर यह कहने का अवसर आया है कि वल्लभभाई वस्तुतः उन उपकरणों से बने थे जिनसे शहीद का सृजन होता है। वह एक योद्धा थे। बुद्धि-विवेक, परिस्थिति, मौनावलंबन और संघटनशक्ति ने इस योद्धा को योद्धा से ऊपर उठाया था और तत्त्वतः योद्धा होते हुए भी उसे सेनापति-सरदार के आसन पर ला खड़ा किया था। वल्लभभाई में वह कूट रहस्यमयता नहीं, जो राजनीतिज्ञ की खास चीज़ है; पर उनमें वह गंभीरता और प्राणोन्मादकारी साहस दोनों उपयुक्त मात्रा में थे, जो एक सफल सरदार या सेनापति के निर्माण के लिए

आवश्यक हैं। युद्ध में वह इस तरह स्वतंत्रतापूर्वक खेलते थे जैसे पानी में मछली तैरती है। उस समय कोई कठिनाई उनका दम नहीं तोड़ सकती। परन्तु राजनीतिज्ञता की बातों और समझौते की चर्चाओं में उनका यह भावावेश शिथिल पड़ जाता था और प्रतिभा कुण्ठित हो जाती थी। उन्होंने स्वयं कहा था– मुझे लड़ते-लड़ते जो संकट और जो उलझन पड जाए, उसे मैं तड़ाक से सुलझा लूँगा। ऐसी उलझनें सुलझाने की सूझ कहाँ से मिलती है, मैं नहीं जानता। परन्तु समझौते की फ़ीकी चर्चाओं में मेरा जी नहीं लगता। ऐसी अकर्मण्य चर्चाओं में कितनी ही बार तो मैं गड़बड़ में पड़ जाता हूँ।

और जब युद्ध चलता हो, तो उनकी वाणी की आग देखिए। मैं दूसरे किसी भारतीय नेता को नहीं जानता जो युद्धकाल में इतने सरल, सीधे, पर इतने शक्तिमान शब्दों की सृष्टि करने में समर्थ हो। उनकी वाणी आग उगलती थी और उसके चन्द नमूने ये हैं– "शत्रु का लोहा गरम भले ही हो जाए, पर हथौड़ा तो ठंडा रहकर ही काम दे सकता है।" बारडोली के किसानों से कष्ट-सहन की तैयारी के लिए कहते हुए– "किसान होकर यह बात मत भूल जाना कि वैशाख-जेठ की भयंकर गर्मी के बिना आषाढ़-श्रावण की वर्षा नहीं होनेवाली है।" या "मरने-मारने की तालीम सिपाहियों को देने में सरकार को छः महीने लगते हैं। हमें तो सिर्फ़ मरना ही सीखना है, उसमें तीन महीने भी क्यों लगने चाहिए?" वल्लभभाई ने विद्वान की परिभाषा भी खूब बनायी थी– "विद्वान वह जो भाषा को अटपटी और कुढंगी बना दे।" विद्यार्थियों के सामने भाषण देते हुए कहते– "अरे, क्या साँप को अपनी केंचुली उतार फेंकने में दुःख होता है, क्या कोई मेहनत पड़ती है? इसी तरह हम भी एक दिन पराये शासन की केंचुली उतार देंगे। उसमें श्रम और कष्ट काहे का?" इसी प्रकार यदि राजसत्ता अत्याचारी हो, तो किसान का सीधा उत्तर यही है-- "जा, जा, तेरे जैसे कितने ही राज मैंने मिट्टी में मिलते देखे हैं।" इसी प्रकार बारडोली सत्याग्रह के समय भाषण देते हुए कहा– "सरकार जेल में मेहमान चाहती है। आप उसे मुँह-माँगे मेहमान देना।" इसी प्रकार गिरफ़्तारी के समय के ये वाक्य भारतीय वातावरण में गूँजते हैं– "सरकार यदि यह समझती हो कि मेरे पंख काट देने से मैं बिना पंखोंवाला हो जाऊँगा, तो यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि वे तो वर्षा की घास की तरह नित्य नये उगते जानेवाले हैं!"

यह युद्ध के समय का बोलना है; पर वैसे वल्लभभाई में बोलने की आदत बहुत कम थी। वह बोलते कम थे, करते अधिक थे। बात-शूर उन्हें लुभा नहीं सकता था। वह लेक्चर फट कारनेवाले आदमी नहीं थे। विज्ञापनबाज़ी उन्हें पसन्द नहीं; और हो भी तो बहुत थोड़ी, आवश्यकता-भर; व्यक्तिगत की तो बिलकुल ही नहीं। वह गरजनेवाला मेघ नहीं, बरसनेवाला धुआँधार थे। वैसे उनका मौन गज़ब का था। वह ठोस वीरता के पुजारी योद्धा थे, पोल के शब्द उन्हें आकर्षित नहीं कर सकते थे।

कठोर मुख, दृढ जबड़े, शत्रु को ललकारती आँखें जिनमें उनके लिए व्यंग्य और ज़हर भरा हो, यह वल्लभभाई थे! एक अंग्रेज़ी पत्रकार ने ठीक ही लिखा था कि उनकी मुखमुद्रा से उनकी आन्तरिक शक्ति का पता चलता है। उनके व्यंग्य अपने विष के लिए अमर हैं। गाँधीजी से लेकर साधारण अनुयायी तक किसी पर व्यंग्य करने का अवसर आने पर व्यंग्य करने से नहीं चूकते। तूफ़ानों में वह चट्टान की भाँति अचल थे, विरोधी के प्रति लोहे की भाँति सख्त। गाँधीजी का इस्पात का लचीलापन उनमें नहीं था। विरोधी, चाहे वे काँग्रेस के अन्दर के हों या बाहर के, उनसे डरते थे। क्योंकि यह वह आदमी थे जो पीछे लगे, तो जड़ उखाड़कर फेंक दे। निश्चय ही संगठन और कार्य की उनमें अपूर्व क्षमता थी और गुजरात में उनकी शक्ति को ललकारनेवाला कोई पैदा नहीं हुआ।

फिर इन सबके अलावा वल्लभभाई ने किसानों का दिल देखा था और भारत के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में उन्हें अपना लिया था। वह किसानों को खूब समझते थे और किसानों ने उन्हें खूब समझा। काका कालेलकर ने ठीक ही लिखा– "जब किसान व्याकुल होने लगता है, तब वल्लभभाई का खून खौलने लगता है।" इस दर्द के कारण ही उन्होंने गाँवों को अपना क्षेत्र बनाया और किसानों को अपनाने के लिए स्वयं किसान बन गये।

I कठिन शब्दार्थ :-

की नाई - की तरह; जोखिम - खतरा; जूझना - संघर्ष करना / लड़ना; बल्लियाँ उछलना - बहुत खुश होना; काँख- बगल; काबू - नियंत्रण / बस / अधिकार; निष्ठुर - बेरहम; अनुचर - पीछे चलनेवाला/ दास / नौकर; तात्विक - वास्तविक; कुण्ठित - निराशा; फीकी - बेअसर; आग्नेय - जलता हुआ / क्रोध; सेनानी - सेनापति धुआँधार - बरसनेवाला बादल

II संदर्भ सहित व्याख्या कीजिएः-

1. मेरे साथ कोई खिलवाड़ नहीं कर सकता। मैं किसी ऐसे काम में नहीं पड़ता जिस में खतरा या जोखिम न हो।

2. क्या देख रहा है भाई? लोहा ठंडा हो रहा है। तुझसे नहीं बनता तो मैं भोंक लूँ।

3. शत्रु का लोहा भले ही गरम हो, पर हथौड़ा तो ठंडा रहकर ही काम दे सकता है।

4. मरने-मारने की तालीम सिपाहियों को देने में सरकार को छः महीने लगते हैं। हमें तो सिर्फ़ मरना ही सीखना है। उसमें तीन महीने भी क्यों लगने चाहिए।

5 सरकार यदि यह समझती हो की मेरे पंख काट देने से मैं बिना पंखवाला हो जाऊँगा तो यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि वे तो वर्षा की घार की तरह नित्य नये उगते जानेवाले हैं।

III वाक्यों में प्रयोग कीजिए:

आग बबूला होना, शंठ प्रतिशाठयम, मटिया मेट कर देना, शंठ प्रत्यपि सत्यं

IV पर्यायवाची

शिक्षक, फूल, उपहार, संकट, नित्य, वर्षा, विद्यार्थी, शुरू

V एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. वल्लभ भाई पटेल पाठ के लेखक का नाम क्या है?
2. वल्लभ भाई किस प्रकार के व्यक्ति थे?
3. वल्लभ भाई ने अपने जीवन में किन व्यक्तियों के महान गुणों को अपनाया?
4. वल्लभ भाई कब बहुत खुश होते थे?
5. मरने मारने की तालीम देने में सरकार को कितने महीने लगते थे?

VI तीन वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. पटेल और महात्मा के गुणों में क्या अंतर था?
2. वल्लभ भाई की निर्भिकता का परिचय दीजिए।
3. पटेल लोकमान्य के किन गुणों से प्रभावित थे?
4. पटेल का स्वभाव कैसा था?
5. किसानों के प्रति पटेल का विचार क्या था?

VII पाँच-पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. वल्लभ भाई पटेल के जीवन के बारे में पाँच वाक्य लिखिए।
2. खतरे को देखकर वल्लभ भाई क्या अनुभव करते थे?
3. काँख में निकले फोडे का इलाज़ कैसे हुआ?
4. बाारडोली किसानों की परिस्थिति का वर्णन कीजिए।
5. युद्धकाल में पटेल के व्यवहार का वर्णन कीजिए।
6. काका कालेलकर ने वल्लभ भाई पटेल के बारे में क्या कहा था?